लेख

न्याय का अन्याय: शालीशी अदालतें

जयदीप मजूमदार

जब पश्चिम बंगाल की एक 'अदालत' ने एक स्त्री का सामूहिक बलात्कार किए जाने का आदेश सुनाया, जिसका जुर्म था एक अन्य गांव और समुदाय के विवाहित पुरुष के साथ संबंध रखना, तो देश भर में सभी स्तब्ध रह गए। लेकिन यह बात कुछ ही लोग जानते हैं कि ऐसे अवैध न्यायालय जिन्हें बंगाल में *शालीशी अदालतें* कहा जाता है राज्य के भीतरी ग्रामीण इलाकों में बड़े पैमाने पर काम कर रही हैं और वे मृत्युदंड की सज़ा तक देती आई हैं। ऐसे तालीबानी हुक्म सुनाने वालों को शायद ही कभी क़ानून के सामने लाया गया है।

फ़ारसी मूल के बंगाली शब्द 'शालीशी' का अर्थ है मध्यस्थता या बीच-बचाव। लेकिन इन अवैध अदालतों में वास्तव में जो कुछ होता है वह मध्यस्थता का एक मज़ाक है। हालांकि इन अदालतों का काम सिर्फ़ छोटे-मोटे झगड़े सुलझाना होता है लेकिन यह अदालतें चोरी से लेकर विवाहोत्तर संबंध और बलात्कार जैसे अनेक अपराधों पर फ़ैसले सुनाती हैं और वे भी अन्यायी और पूर्वाग्रह पूर्ण। बलात्कार के अधिकांश मामलों में मुल्ज़िम छोटा-मोटा जुर्माना भर के छूट जाता है विशेष रूप से यदि वह पैसे वाले या प्रभावी परिवार से हो। जो हुक्म मानने से इनकार करते हैं उन्हें उसकी बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। पूर्व मदिनापुर ज़िले के बेटला गांव के मुनीरुल हक़ का मामला देखिए। एक स्थानीय तृणमूल कांग्रेस नेता निज़ामुद्दीन आलम की अध्यक्षता वाली *शालीशी अदालत* ने पिछले वर्ष सितम्बर माह में गांव के एक दुकानदार की बेटी को छेड़ने के आरोप में मुनीरुल को जुर्माने में 25,000 रुपये देने का आदेश दिया। एक गरीब मज़दूर मुनीरुल ने कहा कि वह इतनी बड़ी रकम नहीं दे सकता इसलिए उसका जुर्माना माफ़ किया जाए। निज़ामुद्दीन जो उस दुकानदार का भाई था ने कहा कि जुर्माने की एवज़ में उसे अपनी सोलह साल की बेटी की शादी 46 साल के मर्द से करनी होगी जिसकी पहले से दो बीवियां थीं। मुनीरुल को राज़ी होना पड़ा क्योंकि उसके पास और कोई चारा नहीं था।

ये अदालतें अपनी मनमर्ज़ी से फ़ैसले करती हैं। उदाहरण के लिए व्यभिचार के लिए सज़ा कुछ हज़ार रुपये जुर्माने से लेकर मृत्युदंड तक हो सकती है। जबकि एक छोटा-मोटा चोर जुर्माने से लेकर, सरेआम कोड़े मारे जाने या गांव निकाला दिए जाने की उम्मीद कर सकता है।

यह सब मुल्ज़िम की सामाजिक-आर्थिक स्थिति तथा *शालीशी अदालत* के सदस्य, गांव के बड़े-बूढ़ों की मर्ज़ी और मुल्ज़िम और उसके परिवार से उनके रिश्तों पर निर्भर करता है। यदि किसी धनी और प्रभावशाली परिवार की स्त्री पर विवाहोत्तर संबंधों का इल्ज़ाम लगता है तो संभावना है कि उसे चेतावनी और जुर्माने के बाद छोड़ दिया जाएगा परन्तु वही 'अपराध' यदि किसी ग़रीब परिवार की स्त्री करती है तो उसका सिर मुंडवाने से लेकर गांव में निर्वस्त्र घुमाने तक की कड़ी सज़ाएं दी जा सकती हैं।

जैसे यदि किसी व्यक्ति पर नशे में धुत होने का इल्ज़ाम लगता है और उसके परिवार के संबंध विपक्षी दल से हैं तो निश्चय ही उसे मिलने वाला दंड कही अधिक कठोर होगा।

इसमें कुछ भी क़ानूनी नहीं है

2004 में वामपंथी सरकार ने पश्चिम बंगाल में ब्लॉक स्तर पर वाद समाधान समिति विधेयक (जिसे शालीशी विधेयक के नाम से अधिक जाना गया) के द्वारा *शालीशी अदालतों* को क़ानूनी मंजूरी देने की कोशिश की। इस विधेयक के अन्तर्गत प्रत्येक प्रशासकीय ब्लॉक में छोटे–मोटे झगड़ों के समाधान के लिए समाधान समितियों की स्थापना की जानी थी परन्तु विपक्ष में कांग्रेस व तृणमूल कांग्रेस ने शोर मचाया और विधेयक के विरुद्ध आंदोलनों की झड़ी लगा दी। अन्ततः सरकार को राज्य की विधानसभा में यह बिल लाने की योजना त्यागनी पड़ी। विपक्षी दलों का कहना था कि वामपंथी (मुख्यतः सीपीएम) इन समाधान समितियों में अपने दल के लोगों की नियुक्ति करेंगे और इस तरह से वे ग्रामीण क्षेत्र में अपनी पकड़ मज़बूत करेंगे।

इसके बावजूद *शालीशी अदालतें* फलफूल रही है। वर्तमान में ग्रामीण इलाकों में ये 'अदालतें' तृणमूल कांग्रेस की पकड़ मज़बूत कर रही हैं।

"यहां दंड का चुनाव करने पर कई बातों का असर पड़ता है, परन्तु हमेशा उन्हें ही सबसे सख़्त सज़ा दी जाती है जिनका कोई आर्थिक या राजनीतिक प्रभाव नहीं होता", यह कहना है कलकत्ता विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र के अध्यापक देबांजन मिश्रा का जो पिछले कई वर्षों से इन *शालीशी अदालतों* के फ़ैसलों का लेखा-जोखा रख रहे हैं।

शालीशी अदालतों द्वारा दिए जाने वाले मृत्युदंड प्रायः अत्यन्त गोपनीय तरीक़ों से अमल में लाए जाते हैं। इनमें पूरा गांव 'अमृत' यानी मौन रहने की शपथ लेता है। इस प्रकार से ऐसे लोगों को क़ानूनी शिकंजे में लाने की सभी कोशिशें नाकाम रहती हैं। यहां तक कि इनके शिकार लोगों के शव तक बरामद नहीं होते। एक जाना-माना मामला है, मालदा ज़िले के रतुआ ब्लॉक के सारामारी गांव के 21 वर्षीय वैन-रिक्शा चालक शेख़ सरिउल का। सरिउल पर उसी गांव के एक धनी किसान की पत्नी के साथ अवैध संबंध रखने का आरोप था। उसे 27 अगस्त 2010 को 'अदालत' में बुलाया गया। धनी किसान के कबीले के लोगों से भरी 'अदालत' ने उसे मृत्युदंड की सज़ा दी। सरिउल को पीट-पीट कर मार डाला गया और शव को किसान के घर के सैप्टिक टैंक में फेंक दिया गया। एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई और दस लोगों को गिरफ़्तार भी किया परन्तु वे लोग ज़मानत पर बाहर है तथा सबूतों के अभाव में तफ़्तीश आगे नहीं बढ़ पा रही है। मुल्ज़िमों का कहना है कि सरिउल अदालत में पेश होने से पहले ही गांव छोड़ कर भाग गया और भागते हुए सैप्टिक टैंक में गिर गया। सरिउल के परिवार के अलावा पूरा गांव इसी कहानी पर अड़ा रहा अतः पुलिस इस केस में बिल्कुल आगे नहीं बढ़ पाई।

ज़्यादातर उदाहरणों में *शालीशी अदालतों* को राजनेताओं व राजनीतिक दलों का संरक्षण प्राप्त होता है। यह बात विशेष रूप से पिछड़े आदिवासी क्षेत्रों पर अधिक लागू होती है जहां गांव का मुखिया और उसके साथी पूरे गांव को किसी खास पार्टी को वोट देने का 'हुक्म' जारी करते हैं इसलिए राजनीतिक दल उन्हें किसी प्रकार से नाराज़ नहीं करना चाहते। बंगाल में राजनीतिक दल अनेक बार इन अदालतों का इस्तेमाल अपने विरोधियों को सबक सिखाने के लिए करते हैं। बंगाल में यह ढर्रा विशेष रूप से वामपंथी शासनकाल में शुरू हुआ था। इन अवैध अदालतों ने कुछ सच्चे और कुछ झूठे अपराधों के लिए अनगिनत समर्थकों, ऐक्टिविस्टों, कांग्रेस तथा तृणमूल कांग्रेस के स्थानीय नेताओं को जुर्माना, बहिष्कार और निर्वासन की सज़ाएं दी। 2011 में बंगाल में सत्ता में आने के बाद तृणमूल कांग्रेस ने भी अपने राजनीतिक विरोधियों को दबाने और ख़त्म करने के लिए इन अवैध अदालतों की मदद लेने से परहेज़ नहीं किया।

जयदीप मजूमदार *टाइम्स ऑफ़ इण्डिया अखबार के पत्रकार हैं।*